International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 21-01-2026, Accepted: 20-02-2026, Published: 07-03-2026
Volume 12, Issue 1, 2026, Page No. 210-214

लक्ष्मीनारायण रंगा का निबंध–संग्रह 'योद्धा सन्यासी' एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य

विजयलक्ष्मी व्यास[1], डॉ. अशोक धारनिया[2]
[1] शोधार्थी, टांटिया यूनिवर्सिटी, श्रीगंगानगर, राजस्थान, भारत
[2] सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, टांटिया यूनिवर्सिटी, श्रीगंगानगर, राजस्थान, भारत

सारांश
बहु आयामी साहित्य शिल्पी लक्ष्मीनारायण रंगा ने अनेक प्रभावपूर्ण निबंधों का सृजन किया है। उनके निबंधों में जहाँ एक ओर विषय की व्यापकता है वहीं दूसरी ओर प्रतिपाद्य विषय का सूक्ष्मता से विवेचन भी देखने को मिलता है। उनके द्वारा साहित्य, धर्म, इतिहास, शिक्षा, रंगमंच, लोक संस्कृति, लोक जीवन के साथ–साथ मानवीय संवेदनाओं को केन्द्र में रखकर जिन निबंध संग्रहो का सृजन किया है, उनकें से प्रमुख निबंध संग्रह हैं– "योद्धा सन्यासी", "राजस्थान के अमर साधक", "शिक्षाः कुछ अनुभव", "ढाई आखर प्रेम के", "रंगमंच" और "रंग रंगीलो बीकानेर" आदि। उनके निबंधो का प्रतिपाद्य विषय चाहे जो भी, उसके वर्तमान सम–सामयिक संदर्भ क व परिप्रेक्ष्य से पाठक के रूबरू जरूर कराते हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में उनके निबंध संग्रह "योद्धा सन्यासी" के निबंध–त्रयी 'महासेतु', 'स्वामी विवेकानंद : नारी दलित विमर्श', व "स्वामी विवेकानंदः राजस्थान की देन" का विवेचन किया गया है। इस निबंध संग्रह में कट्टरता, रूढ़िवादिता, संकीर्णता, अन्धविश्वास, छूआछूत, बाल विवाह, दहेज, लिंगभेद, नशाखोरी जैसी सामाजिक बुराईयों, दीन–हीन दलित, निरक्षर एवंगरीब जनता की समस्याओं के साथ–साथ त्याग, करूणा, समानता, स्वतन्त्रता, बन्धुत्व, प्रेम, दया आदि जैसे जीवन मूल्यों की निबंधकार ने संदर्भ सापेक्ष वर्णन किया है, जिनकी प्रासंगिकता आज भी ज्यों की त्यों बनी हुई है। यद्यपि निबंध–साहित्य के विषय के वर्गीकरण की दृष्टि से यह निबंध–संग्रह 'एतिहासिक निबंध' या 'धार्मिक निबंध' की कोटि में रखा जाना चाहिए क्योंकि इसमें इतिहास पुरूष व सन्यासी स्वामी विवेकानंद के जीवन–प्रसंगों का उल्लेख है तथापि पूरे निबंध संग्रह के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि निबंधकार ने जैसे सारा वर्णन वर्तमान समस्याओं को केन्द्र में रखकर तथा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में लिखा हो।

मूल शब्दः यौद्धा सन्यासी, स्वामी विवेकानंद, महासेतु, विश्व–बंधुत्व, सर्व धर्म, समभाव, साम्प्रदायिक एकता, राष्ट्रीय गौरव, जातीय स्वाभिमान, दीन–हीन दलित, निरक्षर एवं गरीब, नारी सम्मान, बाल विवाह, संकीर्णता, ऊंच–नीच, छूआछूत, शिक्षा, दरिद्र–नारायण

प्रस्तावना

लक्ष्मीनारायण रंगा ने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में साहित्य–सृजन किया है। उनके द्वारा नाटक, एकांकी, लोकनाट्य, कहानी, लोककथा, लघुकथा, बोध कथा, बाल साहित्य, जीवनी, गीत, लघु कविता, दीर्घ कविता, व्यंग्य कविता, हाइकू, बहुरूपा, चतुष्पदी, गजल, दोहे, बीजीकाएं एवं अन्य अनेक स्फुट रचनाओं के माध्यम से साहित्य क्षेत्र में बहु आयामी योगदान किया है। श्री रंगा द्वारा रचित उक्त विधाओं के अतिरिक्त अन्य गद्य विधाओं यथा निबंध, आलेख, सूक्त, लोक साहित्य, संस्मरण एवं जीवनी साहित्य आदि के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान किया गया है।

प्रस्तुत शोध–पत्र का अध्ययन–क्षेत्र लक्ष्मीनारायण रंगा के निबंध–संग्रह "योद्धा–सन्यासी' की तक ही सीमित है। अतः प्रस्तुत शोध–पत्र में "योद्धा–सन्यासी' निबंध संग्रह का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ही विवेचनात्मक अध्ययन किया गया है। श्री रंगा द्वारा सृजित निबंध संग्रह 'योद्धा सन्यासी' में स्वामी विवेकानंद के जीवन, दर्शन एवं चिंतन से संबंधित निबंध हैं। स्वामी विवेकानंद जीवन में प्राचीन अध्यात्म, संस्कृति एवं दर्शन के साथ–साथ अधुनातन एवं युग सापेक्ष विषयों पर चिंतन उन्हें महासेतु की भूमिका में ला खड़ा कर देता है। उनके इस महासेतु स्वरूप की विवेचना 'महासेतु, नामक निबंध में विस्तार से लेखक ने लिखा है। स्वामी विवेकानंदः नारी दलित विमर्श शीर्षक से लिखे गये निबंध में स्वामी विवेकानंद के नारी की शिक्षा एवं समानता से संबंधित विचारों का उल्लेख किया गया है। दलितों की दीन हीन दशा के विरूद्ध, बाल विवाह तथा इसी प्रकार की अन्य कुरीतियों के विरूद्ध उनके चिंतन एवं उनके जीवन के व्यवहारिक पक्ष का वर्णन किया गया है। इस पद्य संग्रह में तीसरा निबंध है– स्वामी विवेकानंदः राजस्थान की देन। इसमें लेखक ने स्वामी विवेकानंद के राजस्थान से करीबी एवं भावनात्मक संबंधों का विवेचन किया है। स्वामी विवेकानंद के स्वामी विवेकानंद नामकरण से लेकर उनके शिकाँगो जाने तक की सारी व्यवस्था राजस्थान के खेतड़ी नरेश द्वारा की गई थी। राजस्थान से जुड़े अन्य भावपूर्ण प्रसंग भी इस निबंध मे उल्लेखित हैं।

विषय–विस्तार

निबंध–साहित्य

निबंध शब्द की व्युत्पत्ति 'नि' उपसर्ग पूर्व बंध धातु या शब्दांश से मानी जाती है। 'नि' का अर्थ है– विशेष प्रकार से, भली–भांति या उचित ढंग से, तो 'बंध' का अर्थ है– बांधना। अर्थात् विचारों को विशेष ढंग से, विशेष दृष्टि से प्रस्तुत करना। अतः निबंध मे विचारों का एक कसावपूर्ण तारतम्य होना चाहिए। साथ ही सुसंगठन और सुबद्वता भी। वर्तमान प्रचलित निबंध अंग्रेजी के ऐसे का (Esay) पर्यायवाची है। जहां इसका अर्थ प्रयास, प्रयोग, परीक्षण है। यूरोपियन साहित्य मे निबंध का जनक मोंटेन (मौनतेय) को माना जाता है।[1] निबंध का पूर्व रूप संदर्भ, रचना, प्रस्ताव, लेख है तथा पर एवं विकसित रूप प्रबंध, लघु प्रबंध एवं शोध प्रबंध है। जिस पकार वाक्य का विस्तृत रूप प्रोक्ति है उसी प्रकार निबंध का विस्तृत एवं व्यापक रूप प्रबंध है। जिसमें व्यवस्थित क्रमानुसार ठीक से परस्पर एक दूसरे से बंधे हुए अनेक निबंध होते हैं।[2] विचारों के बिखराव को रोकना या व्यवस्थित रूप से बांधकर विशिष्ट रूप देना निबंध कहलाता है। निबंध मे उस व्यवस्था पर विशेष बल दिया जाता है जहां विचार व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत हो जाता है।[3] वास्तव में निबंध ऐसी विचार प्रधान रचना है, जिसमें तर्कसंगत भाषा – शैली से विषय का निरूपण किया जाता है।

मोंटेन (मौनतेय) के अनुसार – "इच्छित विषय के निरूपण के प्रयास का नाम निबंध हे। निबंध विचारों, उद्धारणों और कथाओं का मिश्रण है।[4] इस संदर्भ में बेकन के अभिमतानुसार – "विछिन्न

चिंतन को लिखित रूप में निबंध कहते है।"[5] जॉनसेन अनुसार– "निबंध स्वछंद मन की वह तरंग है, जिसमें नैरन्तर्य या सुसंगठन न होकर प्रधानतया कि खलता ही रहती है।"[6] जानसन निबंध में नियमबद्धता को अस्वीकारते हैं।

हिन्दी में निबंध–साहित्य

'निबंध' गद्य साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है तथापि हिन्दी साहितय में निबंध का सृजनात्मक विधा के रूप में विकास हिन्दी के आधुनिक काल से माना जाता है। हिन्दी निबंध साहित्य को इसके प्रारंभिक काल से लेकर आज तक चार खण्डों में बांटा गया है– भारतेन्दु युग (सन् 1857–1900), द्विवेदी युग (सन् 1900–1920), शुक्ल युग (सन् 1920–1940) व शुक्लोत्तर युग (सन् 1940–अब तक)।[7] हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु और उनके समकालीन साहितयकारों से निबंध लिखने की परंपरा का प्रारंभ माना जाता है। न केवल निबंध वरन् हिन्दी गद्य साहित्य की कई विधाओं का प्रचलन भारतेन्दु युग से होता है। द्विवेदी युग में निबंध का विकास हुआ। निबंध का चरम विकास कर प्रतिष्ठापित करने का श्रेय शुक्ल युग को है। शुक्ल युग के बाद शुक्लोत्तर युग में हिन्दी निबंधों का चहुमुखी विकास हुआ।

गद्य साहितय में निबंध को एक और श्रेष्ठ विधा के रूप में अपनाया गया है। इसमें लेखक अपने विचारों का प्रतिपादन युक्ति और तर्क के आधार पर करता है। सीताराम चतुर्वेदी के अनुसार – "साधारणतयः निबंध वह साहित्य रूप है जीवन बहुत बड़ा हो न बहुत छोटा, जो गद्यात्मक हो।" इस क्रम में गुलाब राय के अनुसार – "निबंध युग की वह रचना है जिसमें एक सीमित आकार के अन्दर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन विशेष व्यवितकता, स्वच्छंदता, सौष्ठव, सजीवता, आवश्यक संगीत एवं संबद्धता के साथ किया गया है।"[8]

रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार– "गद्य रचना यदि कवियों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है।"[9] किसी लेखक का भाषा पर कितना यह विधा के द्वारा ही जाना जा सकता है। निबंध रचयिता के व्यक्तित्व का परिचायक है। यह इस बात का प्रमाण है कि गद्य और उसकी विधाएं आधुनिक मनुष्य के स्वाधीन व्यक्तित्व के अधिक अनुकूल हैं।

मोटेरूप में स्वाधीनता आधुनिक मनुष्य का केन्द्रीय भाव है। इस भाव के कारण परंपरा की रूढ़ियां दिखाई पड़ती है। सामयिक परिस्थितियों का दबाब अनुभव होता है। भविष्य की संभावनाएं खुलती जान पड़ती है। इसी को इतिहास–बोध कहा जाता है। वर्तमान युग में लिखे जाने वाले साहित्य को इसीलिए आधुनिक माना जाता है।

निबंध विचार प्रकाशन का गंभीर साधन है। व्यापक अर्थ में, राजनीतिक, सामाजिक, अर्थशास्त्रीय एवं वैानिक विषयों के प्रतिपादक लेख को भी निबंध कहते हैं। निबंध की विशेषताओं में विषय नहीं बल्कि आत्मा, आकर, लघुता, मन के स्वाधीन विचरण एवं चिंतन पर आधारित होना, शैली–संक्षिप्त, रोचक एवं व्यंग्य प्रधान होना आदि है।[10] हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार "नये युग में जिन नवीन ढंग के निबंधों का प्रचलन हुआ है वे व्यक्ति की स्वाधीन चितन की उपज है।"[11] इस प्रकार निबंध में निबंधकार की स्वच्छन्दता का विशेष महत्व है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, 'निबंध लेखक अपने मन की प्रवृत्ति के अनुसार स्वच्छंद गति से इधर–उधर फूटी हुई सूत्र शाखाओं पर विचरता चलता है। यही उसकी अर्थ संबंधी व्यक्तिगत विशेषता है। अर्थ–संबंध–सूत्रों की टेढ़ी–मेढ़ी रेखायें ही भिन्न–भिन्न लेखकों के दृष्टि–पथ को निर्दिष्ट करती हैं। एक ही बात को लेकर किसी का मन किसी संबंध सूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। इसी का नाम है एक ही बात को भिन्न दृष्टियों से देखना। व्यक्तिगत विशेषता का मूल आधार यही है।"[12] इसका तात्पर्य यह है कि निबंध में किन्हीं ऐसे ठोस रचना–नियमों और तत्वों का निर्देश नहीं दिया जा सकता जिनका पालन करना निबंधकार के लिए आवश्यक है।

निबंध एक ऐसी कलाकृति है जिसके नियम लेखक द्वारा ही अविष्कृत होते हैं। निबंध में सहत, सरल और आडंबरहीन ढंग से व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होती है। लक्ष्मीनारायण रंगा के निबंधों में यह सहजता, सरलता और आडंबरहीनता पाठक के हृदय को स्पर्श किये बिना नहीं रहता। लक्ष्मीनारायण रंगा द्वारा सृजित निबंध साहित्य के बारे में हिन्दी साहित्य कोष का यह अभिमत अक्षरशः सटीक बेठता है कि– "लेखक बिना किसी संकोच के अपने पाठकों को अपने जीवन अनुभव सुनाता है और उन्हें आत्मीयता के साथ उनमे भाग लेने के लिए आमंत्रित करता है। उसकी यह घनिष्ठता जितनी सच्ची और सघन होगी, उसका निबंध पाठकों पर उतना ही सीधा और तीव्र असर करेगा। इसी आत्मीयता के फलस्वरूप निबंध लेखक पाठकों को अपने पांडित्य से अभिभूत नहीं करना चाहता।"[13]

लक्ष्मीनारायण रंगा का निबंध–साहित्य

रंगा जी ने अनेक प्रभावपूर्ण निबंधों का सृजन किया है। उनके निबंधों में जहाँ एक और विषय की व्यापकता है वहीं दूसरी ओर प्रतिपाद्य विषय का सूक्ष्मता से विवेचन देखने को मिलता है। उनके द्वारा साहित्य, धर्म, इतिहास, शिक्षा, रंगमंच, लोक संस्कृति, लोक जीवन के साथ–साथ माननवीय संवेदनाओं को केन्द्र में रखकर अनेक निबंधों का सृजन किया गया है। "योद्धा सन्यासी", "राजस्थान के अमर साधक", "शिक्षाः कुछ अनुभव", "ढाई आखर प्रेम के", "रंगमंच" और "रंग रंगीलो बीकानेर" आदि शीषकों से सृजित उनके निबंध साहित्य में न केवल राजस्थानी जन मानस को वरन् सम्पूर्ण भारतीय जन मानस को प्रभावित करने वाले अनेकानेक विषयों का प्रतिपादन किया गया है। प्रस्तुत शोध–पत्र में निबंध–संग्रह "योद्धा सन्यासी" का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विवेचनात्मक अध्ययन का प्रयास किया गया है।

योद्धा सन्यासी

'योद्धा सन्यासी' शीर्षक से संकलित निबंध–संग्रह में क्रमशः महासेतु, विवेकानंदः नारी–दीन दलित विमर्श एवं 'विवेकानंद–राजस्थान की देन', कुल तीन निबंध हैं। इस निबंध संकलन में स्वामी विवेकानंद के जीवन एवं कार्यो के प्रभावों का राष्ट्र एवं समाज के विभिन्न परिप्रेक्ष्यों मे विवेचना की गई है। विश्व कवि रविन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा था कि "यदि आप भारत को समझना चाहते हैं तो विवेकानंद की अध्ययन कीजिए।"[14] विश्वकवि के इस कथन को निबंधकार वैश्विक समस्याअें के परिप्रेक्ष्य में उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि यदि "आज के भौतिकतादग्ध एवं आतंक व तनाव ग्रस्त विश्व की समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए विश्वकवि की बात को हम इस तरह प्रतिपादित कर सकते हैं कि "अगर आप विश्व व उसकी समस्याओं को समझना तथा उनका सकारात्क समाधान चाहते हैं, तो विवेकानंद का अध्ययन कीजिए।"[15]

लेखक द्वारा स्वामी विवेकानंद के बहु आयामी व्यक्तित्व को ध्यान मे रखते हुए 'महासेतु' निबंध रचना के शीर्षक "महासेतु" रखे जाने की सार्थकता स्वयंसिद्ध है।[16] स्वामी विवेकानंद के जीवन एवं दर्शन से संबंधित विभिन्न आयामों की विवेचना इस निबंध का प्रतिपाद्य विषय हैं। लेखक इस निबंध में स्वामी जी के जीवन के अनेक प्रसंगों एवं उनके व्यापक मौलिक चिंतन का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि वे "पूर्व एवं पश्चिम, आध्यातिमकता एवं भौतिकता, पुरातन एवं अर्वाचीन तथा सैद्धान्तिकता एवं व्यावहारिकता के बीच विवेक सेतु व मिलन सेतु थे।"[17]

स्वामी विवेकानंद के जीवन एवं चिंतन में भारतीय सीयता, संस्कृति, अध्यात्म, विश्व–बंधुत्व, सर्व धर्म समभाव, साम्प्रदायिक एकता, राष्ट्रीय गौरव, जातीय स्वाभिमान, समानता, स्वतंत्रता आदि

विभिन्न विषयों पर उनकाअभिमत मिलता है। लेखक ने स्वामी जी के जीवन के विभिन्न प्रसंगों का उल्लेख करते हुए यह दिखाया है कि किस पकार स्वामी विवेकानंद कट्टरता, रूढिवादिता, संकीर्णता, अन्धविश्वास, छूआछूत, बाल विवाह, दहेज, नशाखोरी आदि कुप्रथाओं के कट्टर विरोधी थे तथा दीन–हीन दलित, निरक्षर एवं गरीब जनता के मसीहा थे। अशिक्षा, निरक्षरता को दूर करने के साथ–साथ स्वामी विवेकानंद सामाजिक क्षेत्र में अनेक सुधारों के पक्षधर थे।

श्री रंगा द्वारा लिखित 'विवेकानन्दः नारी–दीन दलित विमर्श' निबंध में स्वामी विवेकानंद के नारी एवं दीनहीन जन तथा दलितों के उत्थान के लिए किये गये प्रयत्नों एवं विचारों पर प्रकाश डाला गया है। समाज में आज भी स्त्रियों के साथ–साथ दीनों एवं दलितों की स्थिति पर्याप्त समान्न एवं संतोषजनक नहीं है। किसी न किसी रूप में आज भी उनका शोषण किये जाने की घटनाएं घटती रहती हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानंद के विचारों एवं प्रयासों का उल्लेख करते हुए निबंधकार लिखते हैं– "आज के अन्तरिक्षी युग में, ज्ञान–विज्ञान के उत्थानकाल में, साईबर क्रान्ति के दौर में, वैश्वीकरण की प्रक्रिया के वक्त में, मीडियाज के प्रचार–प्रसार के दौड़ में हम जिस दलित और नारी–विमर्श को लेकर चिन्ताएं अभिव्यक्त करते है– संवेदनाएं प्रकट करते हैं, राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक–चिंतन–मंथन–सर्जन करते हैं– उस दलित और नारी–विमर्श पर सुधार–क्रान्तिवीर, संन्यासी–योद्धा, युवा–चेतना के शंखनाद, आध्यात्म के नेपोलियन, समाजवादी चिंतक, स्वामी विवेकानन्द ने अपने विचारोत्तेजक विचार व व्यावहारिक समाधान एक शताब्दी से पूर्व ही अभिव्यक्त कर दिए थे। वे विचार आज भी सामयिक हैं, सार्थक हैं – चिंतनीय हैं। नारी उनके लिए माँ काली की तरह पूजनीय थी और दलित–दीन–हीन–उपेक्षित सेवा–उपासना के प्रतीक। दरिद्र–नारायण के लिए वे करूणा–सागर बुद्ध थे। वे दलित, दीन–हीन को एक मानते थे – उनको संगठित कर एक करना चाहते थे।[18] समतावादी–समाजवादी विचार–धारा का जो बीज उसके मन की कोमल–उर्वरा माटही में बचपन से ही वपन हो गया था। बढ़ते–बढ़ते वह वट वृक्ष बन गया।"[19] स्वामी रामकृष्ण परमहंस की ज्ञान–दीक्षा ने नरेन्द्र के मन से सभी भेदभावों का उन्मूलन कर, उन्हे विश्व–मानवतावादी बना दिया। 'अहंब्रहास्मि' का साक्षात् ज्ञान करा दिया। प्राणीमात्र का हितैषी। सर्वधर्म समभावी। सार्वदेशिक सार्वकालिक।[20]

योद्धा–सन्यासी और वतमान परिप्रेक्ष्य

योद्धा–सन्यासी निबंध संग्रह में निबंधकार ने स्वामी विवेकानंद के समय घटने वाले तथा उस पर स्वामी के व्यवहार व चिंतन को आधार बनाकर अनेक ऐसे ज्वलंत मुद्दों को उठाया है, जो वर्तमान संदर्भ में भी प्रासंगिक हैं–

नारी के प्रति सम्मान की भावना

लेखक स्वामी विवेकानंद के मन में नारी के प्रति भाव को व्यक्त करते हुए लिखते हैं– विवेकानंद बचपन से ही नारी–सम्मान का भाव रखते थे। नारी विमर्श की बात करें तो उनमें नारी–सम्मान के प्रति आत्मिक समर्पण के दर्शन होते हैं। राजस्थान के खतड़ी महाराज अजीत सिंह द्वारा आयोजित समारोह के अवसर पर राज–गायिका मैनादेवी के कातर अनुरोध पर उसके भजन "प्रभु जी मेरे अवगुण चित न धरो........" पर स्वामीजी उद्वेलित होते गये और अन्त में अति भाव–विभोर होकर मैना देवी के पाँव पकड़कर आँसु बहाते हुए कहा – "माँ! तुमने आज मेरी आँखें खोल दी।" फिर तो जीवन भर दलित, उपेक्षित, पीड़ित, प्रताड़ित नारी के प्रति उनकी आँखे सदेव खुली ही रही।

अमेरिका में 19 सितम्बर को पढ़े निबंध में उन्होंने कहा विश्व–धर्म ऐसा होगा, जो प्रत्येक नारी और पुरुष की दिव्यता स्वीकारेगा।[21] नारी–विमर्श और उनकी समस्याओं के बारे में जो आज चिंतन हो रहौ, अभियान–आन्दोन हो रहे हैं, उनमे से कई प्रमुख समस्याओं पर नारी–उपासक महात्मा विवेकानन्द ने अपने गहन चिंतन–मनन–अनुभव के आधार पर अपने समारात्मक विचार एक शताब्दी से भी पूर्व स्पष्ट अभिव्यक्त कर दिए थे।[22]

लेखक स्वामी विवेकानंद के नारी शिक्षा संबंधी विचारो का हवाला देते हुए लिखता है– "नारी शिक्षा के प्रति भी वे जागरूक थे। मेरी सोच है कि नारी–शिक्षा भावात्मक हो तथा जिससे स्वाभिमान और श्रद्धा के भाव जागें। हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जिससे चरित्र–निर्माण हो, मानसिक शक्ति बढ़े, बुद्धि विकसित हो और देश की नारी एवं युवा–शक्ति अपने पैरों पर खड़ा होना सीखे। जो देश, जो राष्ट्र नारी का आदर नहीं करते वे कभी बड़े नहीं हो पाए हैं और न भविष्य में ही कभी बड़े होंगे।[23] क्या हमारे देश के पतन का कारण भी नारी शिक्षा न होना है, उन्होने कहा–जिन जातियों का शिक्षा से वंचित रखा गया हैं, उन्हे शिक्षा दो। कन्याओं को शिक्षा दो।

बाल–विवाह का विरोध

लेखक ने स्वामी जी के बाल–विवाह संबंधी विचारों का उल्लेख करते हुए लिखा हे कि स्वामी विवेकानंद बाल विवाह जैसी सामाजिक बुराई का सदैव ही विरोध करते रहे। बाल–विवाह के परिणाम–स्वरूप होने वाली दुर्दशाओं से व्यथित होकर उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि 'मैं बाल–विवाह का विरोधी हूँ। जिस प्रथा के अनुसार अबोध बालिकाओं का पाणिग्रहण होता है, उसके साथ में किसी भी प्रकार का संबंध रखना नहीं चाहता।"[25] हम आज भी जिसे पूरी नहीं समझे– वह उन्होंने तब समझ लिया था। 'बाल–विवाह से असामयिक संताने होती है और अल्पायु मे संतान धारण करने के कारण हमारी नारियां अल्पायु होती है।। उनकी दुर्बल और रोगी संतानें देश मे भिखारियों की संख्या बढ़ाने का आधार बनती हैं' उनकी यह सोच आज भी कितनी सार्थक एवं अनुकरणीय है।[26]

अन्तर्जातीय–विवाह

अन्तर्जातीय विवाह के बारे में स्वामी जी विचारों का उल्लेक करते लेखक लिखता है कि "आप आश्चर्य करेंगे कि उस गुलामी और पतन के दौर में भी अन्तर्जातीय–विवाह के बारे में भी उनके विचार कितने प्रगतिशील थे, कितने साहसिक थे। वे अन्तर्जातीय विवाह के तो पूर्ण पक्षधर थे। उन्होंने कहा, मैं भिन्न धर्मावलम्बी–जातियों में अन्तर्विवाह करने के पक्ष में नहीं हूँ। कम से कम आज तों उससे समाज के बंधन बहुत ढीले पड़ जाएंगे और कई अनिष्ट होने की आशंका है। मैं तो अभी केवल सम–धर्मानुयायियों के ही परस्पर अन्तर्विवाह का समर्थन करता हूँ। अन्तर्विवाह में कोई बुराई नहीं।' जातीय–बंधनों और सामाजिक संकीर्णताओं के तथा परम्परांघताओं के उस दौर में ऐसा मत व्यक्त करना कितना जोखिम का काम था। 'कम से कम आज तो' कहकर उन्होने इसके लिए भी भविष्य के द्वार खुले रख दिए थे। जो लगभग आज भी बन्द हैं।[27]

लिंग–भेद

लेखक नारी असमानता व लिंग भेद के संदर्भ में स्वामी जी के विचारों का उल्लेख करते हुए कहता है कि "वे (स्वामी जी) देश के पतन का प्रमुख कारण भी नारी की उपेक्षा तथा लिंग–भेद को मानते थे। उनका मत था राष्ट्र की श्रेष्ठता व उन्नति का मापदण्ड है, उनका नारी के प्रति व्यवहार। देवी मां का जीवन्त रूप है, मत सोचो कि तुम्हारे उन्नत होने का कोई अन्य मार्ग है। हमारे देश के पतन का मुख्य कारण यह है कि 'हमने शक्ति की इन सजीव प्रतिमाओं के प्रति आदर–बुद्धि नहीं रखी।'[28] आज के संदर्भ में स्वामी जी के कथन की प्रासंगिकता का उल्लेख लेखक

इस प्रकार करता है– "आज के गैंग रेप के हिंसक दौर में हम मीडिया पर चिल्लाते हैं कि समाज में नारी–सम्मान की भावना जगाओ, यह सूत्र विवेकानन्द एक सदी से पूर्व दे गए थे। पर क्या हुआ? जिस लिंग–भेद की चिन्ता आज खाये जा रही है, नारी–समानता का सोच सताये जा रहा है, विवेकानन्द ने उसके संबंध में भी व्यावहारिक संदेश दे दिया था कि पुत्रियों का लालन–पालन और शिक्षा उतनी ही सावधानी और तत्परता से होनी चाहिए, जितनी पुत्रों की।"[29]

दलित–अछूत, दीन–हीन

लेखक स्वामी जी के दलित–अछूत, दीन–हीन के प्रति व्यवहारिक दृष्टिकोण को बताते हुए लिखते हैं कि "दलित–अछूत, दीन–हीन के लिए वे सदैव चिंतित रहे। सन् 1888 में अपने शिष्य सदानन्द के साथ जाति–पॉति की पूरी तरह उपेक्षा करते हुए दोनों भिखारी रूप में अछूत का हुक्का–पानी स्वीकारते हुए घुमते रहे। एक स्टेशन पर ठहरे स्वामीजी से लोग लगातार तीन दिन तक प्रश्न पूछते रहे। वे बड़ी प्रसन्नता से उनकी जिज्ञासाएं शान्त करते रहे। वे इसमें इतने तल्लीन हो गए कि खाना खाना तक भूल गए। तीसरे दिन सबके जाने पर एक दीन–हीन मनुष्य ने उनसे कहा कि आपने तीन दिन तक कुछ खाया–पिया नहीं। इससे मुझे बहुत पीड़ा हो रही है। स्वामीजी ने पूछा–क्या तुम मुझे कुछ खाने को दोगे? वह बोला मैं निम्न जाति का हूँ– इसलिए पकाया हुआ खाना नहीं दे सकता। सूखा आटा और सब्जियां ला सकता हूँ। आप पकाकर खा लें। स्वामीजी ने प्रेम से कहा 'नहीं तुम्हारे घर जो भी है वह ले आ–मैं वह खा लूंगा।' वह ले आया। विवेकानन्द ने बड़े प्यार और आनन्द से खाया। विवेकानन्द जी जाति नहीं, उसकी मानवता से गद्‌गद् थे।[30]

सन् 1891 में परिव्राजक रूप में उन्होंने मध्य भारत में अछूत हरिजनों के परिवार में बिना किसी छूत–अछूत का ध्यान किए रहे। उन्होंने दरिद्रजन की सेवा का संकल्प किया। हर हालात में उनका हित करने का। एक दिन दीन–दलितों के दुःखों को देखकर विचलित हो गए और कहा–'यदि अपने एक मात्र भगवान ओर परमात्मा तथा ईश्वर–दरिद्र, पीड़ित निर्धन मानव की सेवा के लिए मुझे बार–बार जन्म लेकर हजारों यातनाएं भोगनी पड़े तो निश्चय ही मैं भोगूंगा।' है आज कोई साधु, संन्यासी और मठाधीश, जो ऐसा कह सके, ऐसा कर सके?[31]

शिक्षा का प्रयास

स्वामी विवेकानंद के शिक्षा के क्षेत्र में किये गये प्रयासों का वर्णन करते हुए लेखक लिखते हैं कि "विवेकानन्द शिक्षा को बहुत महत्व देते थे। उन्होंने खेतड़ी नरेश राजा अजीत सिंह के महल की छत पर भौतिकी की प्रयोगशाला स्थापित करा दी और साथ ही लंदन से मंगवाकर एक टेलिस्कोप भी लगावा दिया। ऐसा था स्वामीजी का शिक्षा और राजस्थान से प्यार। उन्होंने खेतड़ी राज्य के दलित–दमित गोला जाति के बालकों की शिक्षा के लिए राजा अजीत सिंह से अनुमति प्रदान कराई और अपने गुरू भाई अखण्डानन्द को यह कार्य सौंपा। दरिद्रो देवो भव, मूर्खो देवा भव' के लिए सेवा–कार्य उन्होंने खेतड़ी से ही शुरू किया। नाथद्वारा में भी स्वामीजी ने एक मिडिल स्कूल की स्थापना की तथा भीलों के लिए सेवा–कार्य प्रारम्भ किये।

समतावादी दृष्टिकोण

लेखक स्वामी जी को विश्वात्मा का सम्बोधन देते हुए कहते हैं कि "विश्वात्मा का समतावादी दृष्टिकोण देखिए– "मेरी दृष्टि में गरीब और अभावग्रस्त, पीड़ित और पद दलित सब समान हैं। मानव मानव में कोई भेद नहीं। देश और समाज के कल्याण के लिए यह आवश्यक है कि दलितों, गरीबों और पिछड़ों को समाज में उचित स्थान दिया जोय।[32] अमेरिका से भारत लौट कर वे आध्यात्मिक ज्ञान–प्रसार के साथ–साथ नर–नारायण और दरिद्र–नारायण की सेवा में लग गए। अकाल के समय बिना जाति–धर्म–वर्ग भेदभाव के सबके लिए सेवा–व्यवस्थाएं कीं, बालकों के लिए अनाथाश्रम खोले, जिनमें किसी भी प्रकार का भेद–भाव नहीं होता था। न नर, न नारी का। न धर्म का, न जाति का। दलित, दीन–हीन के प्रति वे अति संवेदनशील थे। दरिद्र–दलित की अस्मिता–अस्तित्व पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने अपना मत अभिव्यक्त किया 'दरिद्र देवों भवः। मूर्ख देवो भवः।' क्या निर्बल और दुःखी ईश्वर नहीं हैं? पहिले उन्ही की पूजा क्यों नहीं करते? तुम गंगा के किनारे खड़े होकर कुआँ क्यों खोदते हो?[33]

स्वामीजी ने जयपुर प्रवास में पं. सूर्यनारायण जी से आध्यात्मिक चर्चाएं करते आबू में वे किशनगढ़ के वकील मुंशी फैज अली के यहां ठहरते। वहीं पूजा–पाठ, ध्यान–ज्ञान चर्चा, खान–पान करते थे। यह उनके सर्व–धर्म–समभाव का जीवन्त उदाहरण था।[34]

लेखक "योद्धा–सन्यासी" निबंध संग्रह में अनेक अवसरों पर तत्कालीन प्रसंगों के संदर्भ में लिखते हुए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उन समस्याओं और स्वामी जी के सुझाये समाधान का हवाला देते हुए आमजन को प्रेरित करते हैं। स्वामीजी कथनों की प्रासंगिता के बारे में निबंधकार कहते हैं कि स्वामी जी के कथन आज भी उतने ही सत्य हैं, जितना एकसदी से पूर्व थे। 'जिस नारी अस्तित्व एवं अस्मिता, समानता तथा लिंगभेद की बात हम आज करते हैं– स्वामीजी ने सौ वर्ष पहिले ही इस समस्या पर अपने विचार समाज के सामने रख दिए थें उनका अभिमत था कि भारत का ही नहीं अपितु नारी की स्थिति सुधार हुए बिना संसार के कल्याण की कोई संभावना नहीं हैं। एक पक्षी का एक पंख पर उड़ना असंभव है। अगर हम स्वामीजी के विचारों का अनुपालन कर नारी को वह सम्मान देने लगते तो आज जो प्रतिदिन नारी–असम्मान, अन्याय, शोषण, अत्याचार, बलात्कार की मानवता को कलंकित करने वाली घटना घटतही हैं, नहीं घटतीं। काश! समाज इस भविष्य–द्रष्टा के संदेशों का अनुपालन करने लगता। अभी भी देरी नहीं हुई। जागो![35]

मजबूर नारियों अपनी आत्मा, अपना शरीर बेचती हैं– पेट की भूख बुझाने के लिए। ममता की देवी माँ मजबूर होकर कोख की सन्तान बेचती है। सर्वत्र खुले आम गैंग रेप की शिकार होती हैं। घरो–दफ्तरों, सड़कों पर सताई जाती हैं। खरीदी बेची जाती है। जन्मती बच्ची सेलेकर असी वर्ष की बुढ़िया तक हवस की शिकार होती है। न जाने क्या क्या होता है, आज की भारतीय नारी के साथ।[36]

निबंधकार रंगा निबंध के प्रतिपाद्य विषय को वर्तमान संदर्भ में से जोड़ते हुए कहते हैं– "आज भी करोड़ों लोग भूखे, नंगे, बेघर, अशिक्षित और प्रताड़ित हैं। भूख, गरीबी, बेकारी से तंग आकर आत्महत्यायें कर रहे हैं। भूखे–अधभूखे, नंगे–अधनंगे, खुले आसमान के नीचे सोते हैं, सर्दी–तुफान सहते हैं– मर जाते हैं। नई पौध गंदगी में पनपती है, अंधेरे में जीती है और अपराधी बनती है।"[37]

सरकारी योजनाओं और व्यवहारिक जरूरतों के बीच की गहरी खाई की और इशारा करते हुए निबंधकार कहते हैं– "उधर हामरी जन–कल्याणकारी सरकार करोड़ों रूपये अपने पर पानी की तरह बहा रही है। जन हितैषी राजनीति करोड़ों के घोटालों पर घोटाले रचा रही है। विश्व के कल्याण व मानव मात्र को सद्‌मार्ग दिखाने वाले सन्यासी मठाधीश अरबों खरबों की सम्पत्ति को और बढ़ाने के लिए काले धन को उजला बनाने में साधनालीन है।[38] वर्तमान परिप्रेक्ष्य की जन समस्याओं से आंखे मूंदे बैठे क्या राजनेता और क्या धार्मिक मठाधीश निबंधकार सबको चुनौती देता है।

निष्कर्ष

लक्ष्मीनारायण रंगा के निबंध संग्रह 'योद्धा सन्यासी' में स्वामी जी के जीवन के विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से समाज की मुख्यधारा से कटे दीन हीन जन की अर्न्वेदना, संवेदना व भावनाओं को मानवीय धरातल पर चित्रित किया गया है। तयाग, करूणा, समानता, स्वतन्त्रता, बन्धुत्व, प्रेम, दया आदि के स्वामी जी जीवंत मूर्ति थे, इन जीवन मूल्यों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता और अपरिहार्यता के संदभ में निबंधकार पाठको को सचेत और जागरूक करने का भी प्रयास करते है। अनेक तत्कालीन समस्याओं यथा–सामाजिक संघर्ष जाति व वर्ग संघर्ष नारी की सामाजिक स्थिति, लैगिक भेदभाव, बाल विवाह, छूआ–छूत, ऊंच–नीच, दरिद्रता, निर्धनता आदि से मुक्ति के लिए स्वामी जी के द्वारा किये गये प्रयास और सुझाये गये उपचार तथा समाज सुधार, लोक कल्याण, समानता, राष्ट्रीयता, मानवतावाद, साम्यवाद जैसे विषयों पर स्वामी के जीवन व चिंतन के माध्यम से व्यक्त विचार को वर्तमान में भी उसी प्रकार प्रभावी मानते हैं।

निबंधकार इस निबंध–संग्रह में स्वामी जी के जीवन के विभिन्न प्रसंगों का उल्लेख मात्र ही नहीं करते वरन् तत्कालीन समय में जिन समस्याओं से दो चार होना पड़ा तथा स्वामी जी ने जो समाधान बताये, उन समस्याओं ओर समाधानों की आज के संदर्भ में भी प्रासंगिकता भी देखते हैं। यद्यपि स्वामी जी के काल–खण्ड को व्यतीत हुए सौ वर्ष से भी अधिक हो गये है तथापि वर्तमान में भी उन्हीं समस्याओं से हम आज भी संघर्षरत है। वे समस्याएं आज भी ज्यों की ज्यों है। अतएव उस समय बातये गये उपचार की वर्तमान समय में प्रासंगिकता और उपादेयता के प्रति निबंधकार न केवल सजग है वरन् निबंध के पाठकों को इस पर विचार करने के लिए उत्प्रेरित भी करते हैं।

संदर्भ

1. डा. स्वेता चौधरी, सहायक आचार्य, महाराष्ट्र, हिन्दी चेतना भारती, एन एज्यूकेशनल ब्लॉग, निबंध, पृ. 1
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास (आधुनिक काल), महर्षिदयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, प्रकाशक एक्सेल बुक प्रा.लि., नई दिल्ली, पृ. 154
3. वही, पृ. 154
4. सं. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश भाग–1, पृ. 438
5. वही, पृ. 438
6. वही, पृ. 438
7. डॉ. सन्ध्या एस. गर्जे, सम्पादक, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई 2010, पृ. 312
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास (आधुनिक काल), महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, प्रकाशक एक्सेल बुक प्रा.लि., नई दिल्ली, पृ. 154
9. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 463
10. निबंधः उद्भव एवं विकास, हिन्दी साहित्य का इतिहास (आधुनिक काल), महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, प्रकाशक एक्सेल बुक प्रा.लि., नई दिल्ली, पृ. 154
11. वही, पृ. 154
12. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहितय का इतिहास, पृ. 463
13. हिन्दी साहित्य कोष, पृ. 201
14. लक्ष्मीनारायण रंगा, प्राक्कथन, योद्धा सन्यासी, पृ. 4
15. लक्ष्मीनारायण रंगा, महासेत, योद्धा सन्यासी, पृ.7
16. वही, पृ. 7
17. वही, पृ. 7
18. लक्ष्मीनारायण रंगा, विवेकानंद–नारी–दीन दलित विमर्श, पृ. 19
19. वही, पृ. 19
20. वही, पृ. 19
21. 18 सितम्बर, 1893
22. लक्ष्मीनारायण रंगा, विवेकानंद : नारी–दीन दलित विमर्श, पृ. 21
23. लक्ष्मीनारायण रंगा, महासेतु, योद्धा सन्यासी, पृ. 14
24. लक्ष्मीनारायण रंगा, विवेकानंद : नारी–दीन दलित विमर्श, पृ. 21
25. लक्ष्मीनारायण रंगा, महासेतु, योद्धा सन्यासी, पृ. 14
26. वही, पृ. 21
27. वही, पृ. 21
28. वही, पृ. 22
29. वही, पृ. 22
30. वही, पृ. 23
31. वही, प1. 23
32. वही, पृ. 26
33. वही, पृ. 24
34. लक्ष्मीनारायण रंगा, विवेकानंद–राजस्थान की देन, पृत्र 31
35. लक्ष्मीनारायण रंगा, विवेकानंद–नारी–दीन दलित विमर्श, पृ. 23
36. वही, पृ. 27
37. वही, पृ. 27
38. वही, पृ. 27